© 2017 IJSRSET | Volume 3 | Issue 6 | Print ISSN: 2395-1990 | Online ISSN : 2394-4099
Themed Section : Engineering and Technology

संस्कृत काव्यशास्त्र में प्रतिभा–सिद्धान्त

सतीश प्रताप सिंह
(शोधच्छात्र)
संस्कृत विभाग, इ0वि0वि0

संस्कृत काव्यशास्त्र विभिन्न सिद्धान्तों रस सिद्धान्त, अलंकार सिद्धान्त, प्रतिभा सिद्धान्त, वक्रोक्ति, सिद्धान्त ध्वनि सिद्धान्त आदि से ओतप्रोत है। प्रतिभा सिद्धान्त के संस्थापक आचार्य भर्तृहरि है। भर्तृहरि ने प्रतिभा को विश्व की आत्मा माना है और उसे सर्वशक्ति सम्पन्न बताया है

शब्देष्वेवाश्रिता शक्तिर्विश्वस्यास्य निबन्धनी।
यन्नेत्रः प्रतिभात्मायं भेदरुपः प्रतीयते।।[1]

अर्थात् शब्दों में ही विश्व को बांधने की शक्ति है भाषा नेत्र है और प्रतिभा आत्मा है। यही शब्द विभिन्न रुपों में प्रकट होता है।

प्रतिभा का अर्थ व स्वरुप–

प्रतिभा शब्द प्रति उपसर्ग पूर्वक भा धातु तथा आङ प्रत्यय से बना है, प्रत्येक वस्तु प्राप्य भाति भासते इत्यर्थः अर्थात् जो प्रत्येक वस्तु को प्राप्त करके प्रदीप्त होती है।

अभिनवगुप्त गुरु भट्टतौत ने प्रतिभा को प्रज्ञानवनवोन्मेष शालिनी कहा है।

प्रज्ञा नवनवोन्मेषशालिनी प्रतिभा मता। (भट्टतौत)

अर्थात् नव नव ज्ञान को उन्मेषित करने वाली प्रज्ञा को प्रतिभा कहते है।

भर्तृहरि ने इस विषय को विस्तार के साथ स्पष्ट किया है कि किस प्रकार प्रत्येक वस्तु को देखने पर विभिन्न प्रकार की प्रतिभा होती है। यह प्रतिभा पदार्थ के दर्शन के द्वारा अभिव्यक्त होती है। यह अनुभव सिद्ध है इसके स्वरुप का वर्णन करना संभव नहीं है। यह सभी तत्त्वों का यथायोग्य संयोग कराती है। अतः प्रतिभा को सर्वरुपात्मक माना गया है–

विच्छेदग्रहणेऽर्थानां प्रतिभाऽन्यैव जायते।
वाक्यार्थ इति तामाहुः पदार्थेरुपपादिताम्।।[2]
उपश्लेषमिवार्थानां स करोत्यविचारिता।
सार्वरुप्यमिवापन्ना विषयत्वेन वर्तते।।[3]

यह प्रतिभा प्रत्येक जीव में पृथक–पृथक रुप में रहती है और आवश्यकतानुसार विभिन्न स्थितियों में वह प्रस्फुटित होती है। यह प्रत्येक व्यक्ति में संस्कारजन्य होती है। यही मानव जीवन को संचालित करती है।

यथा द्रव्यविशेषाणां परिपाकैरयत्नजाः।
मदादिशक्तयो दृष्टाः प्रतिभास्तद्वतां तथा।।[4]

प्रतिभा की उत्पत्ति शब्द से होती है, जिसमें मानव के संस्कार (या भावनायें) आधार रुप में कार्य करते हैं। ये संस्कार इस जन्म के भी हो सकते हैं और पूर्वजन्य के भी हो सकते हैं। ये संस्कार प्रतिभा को उद्बुद्ध कर जीवन का संचालन करते हैं।

भावनानुगतादेवदागमादेव जायते।
आसत्ति–विप्रकर्षाभ्यामागमस्तु विशिष्यते।।[5]

भर्तृहरि ने प्रतिभा के स्वाभाविक, चरणजन्य अभ्यासजन्य, योगजन्य, अदृष्ट जन्य तथा विशिष्टोपहित छः भेद माने हैं–

स्वभावचारणाभ्यासयोगादृष्टोपपादिताम्।
विशिष्टोपहितां चेति प्रतिभां षड्विधां विदुः।।[6]

भर्तृहरि ने प्रयोगात्मक रुप से सिद्ध किया है कि विश्व के प्रत्येक प्राणी में प्रतिभा आत्मा के रुप में कार्य करती है। प्रतिभा ही प्रत्येक जीव को आवश्यकतानुसार कार्य करने की प्रेरणा देती है। प्रत्येक प्राणी के आहार, प्रेम, द्वेष, चलना–फिरना, कूदना और ध्वनि में अंतर है। यह इस बात को सिद्ध करता है कि प्रत्येक प्राणी अपनी विशिष्ट प्रतिभा के कारण ऐसा करता है–

आहारप्रीत्यभिद्वेष–प्लवनादिषु क्रियासु कः।
जात्यन्वय प्रसिद्वासु प्रयोक्ता मृगपक्षिणाम्।।[7]

काव्यशास्त्रियों ने प्रतिभा को काव्य का हेतु (कारण) स्वीकार किया है। शब्दकल्पद्रुम में प्रतिभा को 'प्रत्युत्पन्नमति' कहा गया है।[8]

आचार्य भामह ने भी प्रतिभा को काव्य का मूल स्वीकार किया है–

'काव्यं तु जायते जातु कस्यचित् प्रतिभावतः।।[9]

अर्थात् काव्य किसी–किसी प्रतिभाशाली में कभी–कभी स्फुरित होती है।

अग्निपुराण में भी प्रतिभा को प्राप्त करना दुष्कर बताया गया है–

नरत्वं दुर्लभं लोके विद्या तंत्र सुदुर्लभा।
कवित्वं दुर्लभं तत्र शक्तिस्तत्र सुर्दुलभा।।[10]

अर्थात् संसार में मनुष्य का जन्म पाना दुर्लभ है विद्या पाकर भी कवित्व पाना और कवित्व पाकर भी नवनवोन्मेषशालिनी प्रतिभा पाना दुष्कर है।

आचार्य दण्डी ने भी प्रतिभा को नैसर्गिक माना है–

नैसर्गिकी च प्रतिभा श्रुतं च बहु निर्मलम्।[11]

आचार्य वामन ने प्रतिभा और प्रज्ञा में विभेद करते हुए प्रज्ञा से शास्त्र रचना तथा प्रतिभा से काव्य करना को माना है।[12]

आचार्य राजशेखर ने भावयित्री व कारयित्री भेद से प्रतिभा को दो रुपों में स्वीकार किया है–

सा च द्विधा कारयित्री भावयित्री च।[13]

कारयित्री प्रतिभा का कार्य है–भावों को क्रियात्मक रुप देना तथा भावयित्री प्रतिभा का कार्य है–ज्ञानार्जन, चिन्तन और मनन।

आनन्दवर्धन ने भी प्रतिभा को काव्यानन्द का कारण माना है तथा कहा है–

सरस्वती स्वादु तदर्थवस्तु निष्यन्दमाना महतां कवीनाम्।
आलोक सामान्यभिव्यक्ति परिस्फुरन्त प्रतिभा विशेषः।।[14]

अर्थात् आस्वादमय रसभाव रुप अर्थरुप तत्व को प्रवाहित करने वाली महाकवियों की वाणी अलौकिक परिस्फुरित होती हुई प्रतिभा के विशेष को प्रकट करती है।

आचार्य कुन्तक ने भी काव्य में कवि प्रतिभा के चरमोत्कर्ष को स्वीकार किया है–

कवि–प्रतिभा–प्रौढ़िरेव प्राधन्येनावतिष्ठते।।[15]

आचार्य मम्मट ने भी प्रतिभा को शक्ति कवित्व बीज संस्कार विशेष कहा है[16] तथा प्रतिभा को काव्य का मूल कारण स्वीकार किया है।

प्रतिभा व्युत्पत्ति (निपुणता) और काव्य के अनुशीलन या अभ्यास से उत्पन्न होती है।

रुद्रट ने प्रतिभा को शक्ति कहा है तथा प्रतिभा के दो भेद–सहजा और उत्पाद्या माना है।

जन्मजात प्रतिभा सहजा है तथा अध्ययन अभ्यास से प्राप्त विद्या उत्पाद्या है।

परवर्ती आचार्य केशव मिश्र, हेमचन्द्र, पंडितराज, जगन्नाथ आदि ने भी भामह की तरह प्रतिभा को प्रमुख काव्य हेतु माना है। इस प्रकार काव्य हेतुओं में प्रतिभा को सर्वाधिक महत्वपूर्ण माना जाता है। कुछ लोग प्रतिभा को सहज मानते है तथा कुछ लोगों न प्रतिभा को प्रज्ञा नवनवोन्मेष शालिनी कहा है। अभिनव गुप्त ने भी अपूर्ण वस्तु निर्माणक्षम प्रज्ञा को प्रतिभा कहा है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि भर्तृहरि ने जिस प्रतिभा सिद्धान्त का सूत्रपात किया वह आगे चलकर काव्य में प्रमुख हेतु बना। प्रतिभा का वैज्ञानिक विवेचन भी प्रतिभा को सर्वशक्तिमान मानता है यह प्रतिभा मनुष्य में जन्म सिद्ध है। प्रत्येक प्राणी में प्रतिभा विशेष रुप में विद्यमान होती जो अवसरानुकूल प्रस्फुरित होती है। मानव में प्रतिभा आत्मा रुप में है। प्रतिभा के बिना मानव की सत्ता सम्भव नहीं है। मानव ही नहीं अपितु पशु–पक्षी भी प्रतिभानुसार कार्य करते हैं–

सर्वः कश्चित् तामेव भगवतीं स्व प्रतिभा प्रमाणत्वेन पश्यति।
तिरश्चां च जातमात्राणां तन्मूल एव व्यवहारः।।

(हेलाराज)

इस प्रकार प्रतिभा जन्मजात एवं लब्धप्रतिष्ठ होती है तथा प्रतिभा के अभाव में जीवन का संचालन करना दुष्कर कार्य है। प्रतिभा ही मनुष्य को अन्य प्राणियों से विभेद करती है तथा जीवन को आधार प्रदान करती है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. वाक्यपदीयम् 1/118
2. वही, 2/143
3. वही, 2/145
4. वही, 2/148
5. वही, 2/151
6. वही, 2/152
7. वही, 2/150
8. शब्दकल्पद्रुम–तृतीय काण्ड
9. काव्यालंकार–भामह–1/5
10. अग्निपुराण–337/3
11. काव्यादर्श–1/103
12. काव्यांलकार सूत्र–1/3/1
13. काव्यमीमांसा–राजशेखर, पृ0 29
14. ध्वन्यालोक लोचनटीका जगन्नाथ पाठक, पृ0 32
15. काव्य प्रकाश मम्मट, आचार्य विश्लेश्वर कारिका–3
16. काव्य प्रकाश–प्रथम उल्लास।